International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 4, April- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015

भगवदगीता का निष्काम कर्मयोग

डॉ.सुमित्रा चारण
व्याख्याता,दर्शनशास्त्र विभाग
राजकीय डूंगर महाविधालय,बीकानेर(राज)

गीता, महाभारत के भीष्म पर्व का एक भाग है। गीता के रचयिता वेदव्यास है। गीता में कुल 700 श्लोक है और 18 अध्याय है।भगवद गीता का मुख्य संदेश निष्काम कर्मयोग है जिसे निम्नलिखित शीर्षकों के द्वारा समझा जा सकता है –

- कर्म का अर्थ – कर्म शब्द की उत्पत्ति संस्कृत की कृ (करणे) धातु से हुई है, जिसका अर्थ होता है – अलग–अलग चेष्टाएँ करना किन्तु गीता में कर्म शब्द का अर्थ है – कर्त्तव्य पालन।इस प्रकार से भगवदगीता में कर्म तथा कर्तव्य को पर्यायवाची अर्थ में प्रयोग किया गया है।
- कर्म की अनिवार्यता – गीता में यह कहा गया है कि कर्म (कर्त्तव्य) का पालन तो करना ही पड़ेगा। कर्म अनिवार्य है।गीता में कर्म से भागने अथवा सन्यास को ठीक नही माना गया है।
- सकाम और निष्काम कर्म – सकाम कर्म वे होते हैं, जिनका पालन हम किसी परिणाम या इच्छित वस्तु को प्राप्त करने के लिये करते हैं जबकि निष्काम कर्म वे हैं जो स्वयं लक्ष्य हैं और जिनका पालन हम परिणाम की भावना से नहीं करते हैं। गीता में निष्काम कर्म का सन्देश दिया गया है। काण्ट का सापेक्ष और निरपेक्ष आदेश सकाम और निष्काम कर्म से मिलता–जुलता है।
- निष्काम भाव से कर्म क्यों करें ? – निष्काम भाव से कर्म इसलिये करना चाहिये क्योंकि हमारा नियन्त्रण केवल कर्म या कर्त्तव्यपालन पर है और परिणाम हमारे नियन्त्रण से दूर है। अतः हमें निष्काम भाव से कर्म करना चाहिये।
- प्रवृत्ति तथा निवृत्ति का समन्वय – कृष्ण कहते हैं कि प्रवृत्ति मार्ग के अनुसार हमें कर्म करने चाहिये और निवृत्ति का मार्ग को अपनाते हुए कर्म फल की भावना से सम्बन्धित सोच को सन्यास दे देना चाहिये। इस प्रकार गीता कर्म के सन्यास की बात नहीं करती बल्कि कर्म फल के सन्यास की बात करती है। यही प्रवृत्ति और निवृत्ति का समन्वय है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 4, April- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

- कर्म, अकर्म और विकर्म –
  - कर्म से तात्पर्य है ऐसे कार्य जिन्हें व्यक्ति बिना परिणाम को सोचे–समझे करता है। गीता में कर्म और कर्त्तव्य एक ही है।
  - अकर्म – इसका अर्थ है कर्म से भागना अर्थात् सन्यास या निवृत्ति मार्ग गीता में इसका खण्डन किया गया है।
  - विकर्म – ये वे कर्म हैं जो किसी फल की इच्छा या स्वार्थ के कारण किये जाते हैं। गीता में इनका भी खण्डन किया गया है और इन्हें निषिद्ध कर्मों की श्रेणी में रखा गया है।
- **लोक संग्रह की धारणा** – जब अर्जुन कृष्ण से पूछते हैं कि आखिर कर्त्तव्यपालन का उद्देश्य क्या है ? तो भगवान कृष्ण कहते हैं कि कर्त्तव्यपालन न तो सुख के लिये करना है और न उसके परिणाम को ध्यान में रखकर करना है बल्कि कर्त्तव्यपालन न तो सुख के लिये करना है और न उसके परिणाम को ध्यान में रखकर करना है बल्कि कर्त्तव्यपालन एकमात्र उद्देश्य है जनता का कल्याण या लोक संग्रह। कृष्ण कहते हैं कि लोकसंग्रह का पालन बिना किसी स्वार्थ, बिना किसी मजबूरी के अपनी स्वतन्त्रता इच्छा से करना चाहिये।
- **नियम स्वधर्म पालन** – गीता में गुण और कर्म के आधार पर समाज को चार वर्णों में बाँटा गया है और प्रत्येक वर्ण के लिये कुछ निश्चित कर्त्तव्य बताये गये हैं, जिन्हें उस वर्ण का स्वधर्म कहते हैं। इस प्रकार गीता में वर्णधर्म ही स्वधर्म है, जिसका निर्धारण व्यक्ति की सामाजिक स्थिति के अनुसार होता है। जैसे – समाज में जिसे क्षत्रिय कहा गया है, उसका स्वधर्म युद्ध करना और समाज में जिसकी स्थिति ब्राह्मण की है, उसका स्वधर्म अध्ययन और अध्यापन है।गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि यदि सर्वधर्म पालन में कष्ट भी उठाना पड़े तो वह आकर्षक दिखने वाले परधर्म से श्रेष्ठ हैं।
- **ई वर्रापण भाव** –गीता में कहा गया है कि यदि व्यक्ति अपने कार्यों को अर्थात् कर्त्तव्यों को उनके फल सहित ईश्वर को समर्पित कर दे तो उसे दो लाभ प्राप्त होंगे –प्रथम तो कर्म का कर्ता फल की इच्छा से मुक्त हो जायेगा तथा द्वितीय कर्ता के अहंकार का अन्त हो जायेगा।
- **स्थितप्रज्ञ** – भगवान कृष्ण कहते हैं कि यदि व्यक्ति निष्काम भाव से कर्म करेगा तो वह स्थितप्रज्ञ बन जायेगा, जो सुख–दुःख में समान भाव रखेगा और दोनों से ही प्रभावित नहीं होगा।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 4, April- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

- **समत्वयोग** – यह स्थितप्रज्ञता का ही अगला चरण है, जिसमें व्यक्ति का अपनी समस्त इन्द्रियों पर नियन्त्रण स्थापित हो जाता है। इसके तीन भेद है – आत्मगत, वस्तुगत और गुणातीत।
- **ज्ञान, कर्म और भक्ति का समन्वय** – गीता में कहा गया है कि व्यक्ति ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनों के योग के साथ कर्म करें तो वह सर्वश्रेष्ठ है और इन तीनों के समन्वय को ही 'अनासक्ति योग' कहते हैं।कर्मयोग का अर्थ है कर्त्तव्य पालन और ज्ञानयोग का अर्थ है शरीर की अनित्यता और आत्मा की नित्यता का ज्ञान।यदि व्यक्ति उपरोक्त दोनों मार्गों को नहीं अपना सकता तो उसे ईश्वर की शरण में जाकर विश्वासपूर्वक उनकी भक्ति करनी चाहिये।
- भक्त तथा भक्ति–गीता में भक्त के चार प्रकार है –
    - **आर्त** – ये वे भक्त हैं जो भ्य के कारण भक्ति करते हैं।
    - **अर्थार्थी** – जो किसी मनोकामना के वशीभूत होकर भक्ति करें, वे अर्थार्थी कहलाते हैं।
    - **जिज्ञासु** – ये वे भक्त होते हैं जो विश्वास और अविश्वास के कारण भगवान को जानने का प्रयास करते हैं।
    - **ज्ञानी** – ये वे भक्त हैं, जिनके लिये एकमात्र ईश्वर ही सत्य है। जैसे – मीरां और प्रहलाद।

ईश्वर के भक्तों में सर्वश्रेष्ठ भक्त ज्ञानी भक्त हैं।इसके अतिरिक्त भगवदगीता में भक्ति के नौ प्रकार बताये गये हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ

1.आचार्य बलदेव उपाध्याय,भारतीय धर्म और दर्शन
2.जगदीशचन्द्र मिश्र,भारतीय दर्शन
3.नरेश प्रसाद त्रिपाठी,भारतीय दर्शन एवं पाश्चात्य दर्शन
4.डॉ. राधाकृष्णन,भारतीय दर्शन
5.प्रो.राजेन्द्र प्रसाद,दर्शनशास्त्र की रूपरेखा
6.डॉ.वेदप्रकाश वर्मा,नीतिशास्त्र की रूपरेखा
7.डॉ. वेदप्रकाश वर्मा,दर्शन विवेचना
8.अशोक कुमार वर्मा,नीतिशास्त्र की रूपरेखा(पाश्चात्य और भारतीय)

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 4, April- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

9.डॉ.कपिलदेव द्विवेदी,आचार शिक्षा

10.डॉ.दिवाकर पाठक,भारतीय नीतिशास्त्र

11.डॉ.नित्यानंद मिश्र,नीतिशास्त्रःसिद्धान्त और व्यवहार

12.डॉ. डी.डी.बदिष्ठे / डॉ.रमाशंकर शर्मा,भारतीय दार्शनिक निबन्ध
13.डॉ. नरेन्द्र सिह महेला,भारतीय दर्शन शब्दकोश
14.सुधा चौधरी,नीतिशास्त्र के बुनियादी सरोकार
15.डॉ.भीखनलाल आत्रेय,भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहास
16.शांति जोशी,नीतिशास्त्र